MEDHĀMANTHAN ISSN : 3139-7840
A Premier Peer-Reviewed, Open-Access, Bimonthly, International Online Research Journal
Dedicated to the fields of Arts, Humanities and Social Sciences
Adhering to UGC Guidelines and Quality Mandates
Volume: 1, Issue: 2 (JUL - AUG) 2026

# 'Saumanasya' in Conjugal Life: The Vedic Vision and Modern Family Dynamics

## दाम्पत्य में 'सौमनस्य' : वैदिक दृष्टि और आधुनिक पारिवारिक जीवन

***Dr. Amit Sharma***

*Assistant Professor, Department of Sanskrit*
*D.A.V. Centenary College, Faridabad, Haryana, India.*
*Email: davccf.sanskrit@gmail.com*
*Page No: 118-124*

***Abstract:*** *In the Indian knowledge tradition, conjugal life is regarded not merely as a contractual union, but as the foundational institution of family, moral values (saṃskāra), and social harmony. Vedic literature establishes core ideals for marital relations, including saumanasya (concord), sahṛdayatā (empathy/cordiality), sāmanasya (mental harmony), avidveṣa (freedom from malice), sweet speech, and sahadharmitā (shared righteousness). The Vivāha-sūkta of the Rigveda aspires to the union of hearts and mutual well-being between husband and wife, while the Atharvaveda emphasizes shared emotional disposition, love, and malice-free conduct in family life. Thus, saumanasya extends beyond simple psychological happiness to embody a comprehensive philosophy of mutual respect, emotional sensitivity, dialogue, cooperation, and non-violent coexistence.*

*In contemporary family life, urbanization, nuclear families, financial pressures, professional stress, shifting gender roles, individualistic aspirations, and breakdown of communication have posed new challenges to marital relationships. In this context, a re-reading of Vedic saumanasya offers an Indian cultural foundation for the modern family. By examining the nature of marital harmony in the light of Vedic and Dharmashastric sources, this study also references the perspectives of Indian thinkers and the contemporary legal framework. The Constitution of India, the Protection of Women from Domestic Violence Act, 2005, and the Bharatiya Nyaya Sanhita, 2023 emphasize the imperative of dignity, safety, and legal protection in modern marriage. The study concludes that saumanasya—grounded in empathy, active dialogue, equal dignity, shared responsibility, and non-violence—presents an impactful Indian worldview to render modern family life more balanced, sensitive, and resilient.*

***Keywords:*** *Saumanasya, Conjugal Life, Vedic Vision, Sahadharmitā, Family Harmony, Indian Knowledge Tradition.*

### भूमिका

भारतीय संस्कृति में परिवार व्यक्ति के जीवन की प्रथम सामाजिक एवं सांस्कृतिक संस्था है। मनुष्य अपने जीवन के प्रारम्भिक संस्कार, भाषा, व्यवहार, नैतिकता, उत्तरदायित्व और सामाजिक चेतना का विकास मुख्यतः परिवार के माध्यम से करता है। इसलिए भारतीय चिंतन में परिवार को केवल रक्त-संबंधों अथवा आर्थिक आवश्यकताओं की पूर्ति करने वाली संस्था न मानकर धर्म, संस्कार और सामाजिक उत्तरदायित्व की आधारभूमि माना गया है।

भारतीय आश्रम-व्यवस्था में गृहस्थाश्रम का विशेष महत्त्व है। गृहस्थ अपने व्यक्तिगत जीवन का निर्वाह करने के साथ परिवार, अतिथि, समाज और अन्य आश्रमों के प्रति भी दायित्वों का निर्वहन करता है। मनुस्मृति में गृहस्थाश्रम को अन्य आश्रमों के पोषण का आधार माना गया है।[1] इस व्यापक व्यवस्था का केन्द्र दाम्पत्य संबंध है। पति-पत्नी के मध्य यदि विश्वास, सम्मान, सहयोग और मानसिक सामंजस्य हो तो परिवार शांति, संस्कार और व्यक्तित्व-विकास का केन्द्र बनता है; इसके विपरीत निरंतर कलह, अविश्वास, अपमान और संवादहीनता परिवार की आंतरिक संरचना को कमजोर कर देती है। वैदिक विवाह-दृष्टि में दाम्पत्य की सफलता के लिए केवल विवाह-संस्कार की औपचारिकता पर्याप्त नहीं मानी गई। पति-पत्नी के मध्य हृदयगत एकता को भी महत्त्व दिया गया। ऋग्वेद के विवाहसूक्त में नवदम्पती के लिए प्रार्थना की गई है—

MEDHĀMANTHAN ISSN : 3139-7840
A Premier Peer-Reviewed, Open-Access, Bimonthly, International Online Research Journal
Dedicated to the fields of Arts, Humanities and Social Sciences
Adhering to UGC Guidelines and Quality Mandates
Volume: 1, Issue: 2 (JUL - AUG) 2026

"समञ्जन्तु विश्वे देवाः समापो हृदयानि नौ।
सं मातरिश्वा सं धाता समुदेष्ट्री दधातु नौ॥"[2]

यह मंत्र दाम्पत्य जीवन के मूल में स्थित उस भाव को अभिव्यक्त करता है जिसमें दो व्यक्तियों का जीवन केवल बाह्य रूप से संयुक्त नहीं होता, बल्कि उनके हृदय भी परस्पर सामंजस्य स्थापित करते हैं। इसी संदर्भ में 'सौमनस्य' की अवधारणा विशेष महत्त्व प्राप्त करती है। यह केवल प्रसन्नता या मानसिक शांति नहीं, बल्कि हृदयगत सामंजस्य, परस्पर सद्भाव, संवेदनशील संवाद और द्वेषरहित सहजीवन की व्यापक भावना है।

समकालीन समाज में परिवार की संरचना और कार्यप्रणाली में व्यापक परिवर्तन आया है। संयुक्त परिवारों का विघटन, एकल परिवारों का विस्तार, नगरीकरण, आर्थिक प्रतिस्पर्धा, रोजगारगत गतिशीलता, स्त्री की बढ़ती आर्थिक स्वतंत्रता और व्यक्तिगत अधिकारों की चेतना ने दाम्पत्य संबंधों को नया स्वरूप दिया है। इन परिवर्तनों ने समानता और स्वतंत्रता के नए अवसर प्रदान किए हैं, किन्तु साथ ही समयाभाव, अपेक्षाओं का संघर्ष, मानसिक तनाव, संवादहीनता और पारिवारिक विघटन जैसी समस्याओं को भी जन्म दिया है। ऐसे समय में भारतीय ज्ञान-परम्परा के मूल्यों का पुनर्पाठ आवश्यक हो जाता है। वैदिक 'सौमनस्य' आधुनिक परिवार को अतीत में वापस ले जाने का आग्रह नहीं करता, बल्कि संबंधों में सहृदयता, सम्मान, संवाद और सह-अस्तित्व को पुनर्स्थापित करने की दिशा प्रदान करता है।

**'सौमनस्य' : अर्थ और वैचारिक स्वरूप**

'सौमनस्य' शब्द का संबंध 'सु' और 'मनस्' से है। सामान्य अर्थ में यह मन की प्रसन्नता, मानसिक अनुकूलता, सद्भाव, संतोष और सामंजस्य का द्योतक है। दाम्पत्य के संदर्भ में इसका अर्थ पति-पत्नी के विचारों का पूर्णतः समान होना नहीं है। दो स्वतंत्र व्यक्तियों के विचार, रुचियाँ, स्वभाव और अनुभव स्वाभाविक रूप से अलग हो सकते हैं। वास्तविक सौमनस्य इस बात में निहित है कि इन भिन्नताओं के रहते हुए भी परस्पर सम्मान और आत्मीयता बनी रहे। अथर्ववेद में परिवार के सदस्यों के लिए अत्यंत महत्त्वपूर्ण प्रार्थना की गई है—

"सहृदयं सांमनस्यमविद्वेषं कृणोमि वः।"[3]

यहाँ 'सहृदयता', 'सामनस्य' और 'अविद्वेष' तीन ऐसे मूल तत्व हैं जो दाम्पत्य-सौमनस्य को समझने में सहायता करते हैं। 'सहृदयता' दूसरे के सुख-दुःख को समझने की क्षमता है; 'सामनस्य' मानसिक सामंजस्य है और 'अविद्वेष' संबंधों में द्वेष को स्थान न देने की चेतना है। अतः सौमनस्य का वास्तविक स्वरूप तीन स्तरों पर देखा जा सकता है— मन का सामंजस्य, वाणी का माधुर्य और व्यवहार का सहयोग। आधुनिक दाम्पत्य में इन तीनों की आवश्यकता अत्यंत अधिक है। केवल आर्थिक सुविधा परिवार को सुखी नहीं बना सकती। यदि भावनात्मक संवाद और पारस्परिक सम्मान का अभाव हो, तो भौतिक समृद्धि के बावजूद संबंधों में तनाव उत्पन्न हो सकता है।

**वैदिक विवाह-दृष्टि में दाम्पत्य-सौमनस्य**

ऋग्वेद का विवाहसूक्त वैदिक दाम्पत्य-चिंतन का प्रमुख स्रोत है। इसमें विवाह को केवल सामाजिक अनुबंध के रूप में नहीं, बल्कि जीवन की मंगलमय सहयात्रा के रूप में प्रस्तुत किया गया है। वधू को परिवार में सम्मानपूर्ण स्थान प्रदान करते हुए कहा गया है—

"सम्राज्ञी श्वशुरे भव सम्राज्ञी श्वश्वां भव।
ननान्दरि सम्राज्ञी भव सम्राज्ञी अधि देवृषु॥"[4]

'सम्राज्ञी' संबोधन दाम्पत्य एवं परिवार में स्त्री के गरिमापूर्ण स्थान का संकेत करता है। इसका आधुनिक अर्थ यह ग्रहण किया जा सकता है कि विवाह के पश्चात् स्त्री को परिवार की सक्रिय, सम्मानित और उत्तरदायी सहभागी के रूप में स्वीकार किया जाए। विवाहसूक्त में पति-पत्नी के हृदयों के सामंजस्य की कामना भी की गई है।

"मम व्रते ते हृदयं दधामि मम चित्तमनु चित्तं ते अस्तु।

MEDHĀMANTHAN ISSN : 3139-7840
A Premier Peer-Reviewed, Open-Access, Bimonthly, International Online Research Journal
Dedicated to the fields of Arts, Humanities and Social Sciences
Adhering to UGC Guidelines and Quality Mandates
Volume: 1, Issue: 2 (JUL - AUG) 2026

मम वाचमेकमना जुषस्व प्रजापतिष्ट्वा नियुनक्तु मह्यम्॥"[5]

इससे स्पष्ट होता है कि वैदिक विवाह का उद्देश्य केवल सामाजिक संबंध स्थापित करना नहीं, बल्कि दो व्यक्तियों के मध्य ऐसी आत्मीयता विकसित करना है जो जीवन के संघर्षों में सहयोग का आधार बने। ऋग्वेद में सामंजस्य के व्यापक सामाजिक आदर्श को व्यक्त करते हुए कहा गया है—

"संगच्छध्वं संवदध्वं सं वो मनांसि जानताम्।"[6]

'संगच्छध्वम्' और 'संवदध्वम्' आधुनिक पारिवारिक जीवन के लिए भी अत्यंत सार्थक हैं। साथ चलना केवल भौतिक सहयात्रा नहीं, बल्कि जीवन के निर्णयों में सहभागिता है। इसी प्रकार संवाद केवल बोलना नहीं, बल्कि एक-दूसरे को समझने का माध्यम है।

**अथर्ववेद में पारिवारिक सौमनस्य**

अथर्ववेद में पारिवारिक संबंधों की मधुरता के लिए अनेक मंगलकामनाएँ मिलती हैं। यहाँ परिवार को ऐसे समूह के रूप में देखा गया है जिसमें सदस्यों के बीच मानसिक एकता और परस्पर सद्भाव आवश्यक है। एक मंत्र में कहा गया है—

"अनुव्रतः पितुः पुत्रो मात्रा भवतु संमनाः।
जाया पत्ये मधुमतीं वाचं वदतु शान्तिवाम्॥"[7]

यहाँ 'मधुमती वाणी' का विशेष महत्त्व है। वाणी केवल विचार व्यक्त करने का माध्यम नहीं, बल्कि संबंधों को बनाने और बिगाड़ने वाली शक्ति भी है। पति-पत्नी के बीच कटु वाणी, व्यंग्य, अपमान और निरंतर आरोप-प्रत्यारोप संबंधों को कमजोर करते हैं। इसके विपरीत संयमित और मधुर संवाद विश्वास को मजबूत करता है। अथर्ववेद में परिवार के सदस्यों को परस्पर द्वेष से बचने की प्रेरणा दी गई है—

"मा भ्राता भ्रातरं द्विक्षन् मा स्वसारमुत स्वसा।"[8]

यद्यपि इसका प्रत्यक्ष संदर्भ पारिवारिक सदस्यों के व्यापक संबंधों से है, इसकी मूल भावना दाम्पत्य के लिए भी महत्त्वपूर्ण है। परिवार में मतभेद स्वाभाविक हैं, किंतु मतभेद को स्थायी द्वेष में परिवर्तित न होने देना ही सौमनस्य की पहचान है।

**स्मृति-परम्परा में दाम्पत्य और गृहस्थधर्म**

वैदिक जीवन-दृष्टि का सामाजिक एवं विधिक विकास धर्मसूत्रों और स्मृतियों में व्यवस्थित रूप से दिखाई देता है। मनुस्मृति, याज्ञवल्क्यस्मृति और नारदस्मृति में विवाह, गृहस्थधर्म, स्त्रीधन, व्यवहार और पारिवारिक दायित्वों से संबंधित अनेक व्यवस्थाएँ प्राप्त होती हैं। मनुस्मृति में स्त्री-सम्मान को पारिवारिक मंगल से जोड़ा गया है—

"यत्र नार्यस्तु पूज्यन्ते रमन्ते तत्र देवताः।
यत्रैतास्तु न पूज्यन्ते सर्वास्तत्राफलाः क्रियाः॥"[9]

इस वचन का आधुनिक संदर्भ में व्यापक नैतिक अर्थ पारस्परिक गरिमा के रूप में ग्रहण किया जा सकता है। दाम्पत्य जीवन में स्त्री और पुरुष दोनों की गरिमा सुरक्षित रहनी चाहिए। याज्ञवल्क्यस्मृति में विवाह, स्त्रीधन और व्यवहार संबंधी विषयों का व्यवस्थित निरूपण प्राप्त होता है।[10] इससे स्पष्ट होता है कि दाम्पत्य संबंधों को भारतीय परम्परा में सामाजिक और विधिक उत्तरदायित्व से भी जोड़ा गया। नारदस्मृति में व्यवहार और विवाद-निवारण की विकसित व्यवस्था मिलती है।[11] यह तथ्य महत्वपूर्ण है कि भारतीय परम्परा ने परिवार और समाज में उत्पन्न होने वाले विवादों की संभावना को स्वीकार करते हुए उनके समाधान के लिए न्यायिक व्यवस्था की आवश्यकता को भी समझा था।

**भारतीय विद्वानों के संदर्भ में दाम्पत्य-दृष्टि**

भारतीय धर्मशास्त्रीय परम्परा को आधुनिक ऐतिहासिक दृष्टि से समझने में पी. वी. काणे का योगदान अत्यंत महत्त्वपूर्ण है। उन्होंने विवाह, गृहस्थधर्म, स्त्रीधन और पारिवारिक व्यवस्था का व्यापक ऐतिहासिक विवेचन किया है। काणे के अध्ययन से यह स्पष्ट होता है कि धर्मशास्त्रीय व्यवस्था किसी एक समय में निर्मित स्थिर संरचना नहीं थी, बल्कि भारतीय समाज के विकास के

MEDHĀMANTHAN ISSN : 3139-7840
A Premier Peer-Reviewed, Open-Access, Bimonthly, International Online Research Journal
Dedicated to the fields of Arts, Humanities and Social Sciences
Adhering to UGC Guidelines and Quality Mandates
Volume: 1, Issue: 2 (JUL - AUG) 2026

साथ उसके अनेक पक्षों में परिवर्तन होता रहा।[12] ए. एस. अल्तेकर ने प्राचीन भारतीय सभ्यता में स्त्री की स्थिति, विवाह और पारिवारिक जीवन का विस्तृत अध्ययन किया। उनका विवेचन यह संकेत देता है कि भारतीय समाज में स्त्री की भूमिका को विभिन्न ऐतिहासिक कालखंडों में अलग-अलग रूपों में देखा गया।[13] इसलिए आधुनिक दाम्पत्य के संदर्भ में भारतीय परम्परा का अध्ययन करते समय ऐतिहासिक गतिशीलता को ध्यान में रखना आवश्यक है। पं. बलदेव उपाध्याय ने वैदिक साहित्य और संस्कृति के विवेचन में वैदिक वाङ्मय के व्यापक सांस्कृतिक एवं जीवनोपयोगी स्वरूप को स्पष्ट किया है।[14] इससे वैदिक 'सौमनस्य' को केवल धार्मिक अनुष्ठान की संकल्पना न मानकर सामाजिक और नैतिक जीवन के मूल्य के रूप में समझने का आधार मिलता है।

इन भारतीय विद्वानों के अध्ययनों से यह दृष्टि पुष्ट होती है कि भारतीय पारिवारिक चिंतन को उसके ऐतिहासिक, सामाजिक और सांस्कृतिक संदर्भ में समझना चाहिए। इस दृष्टि से वैदिक 'सौमनस्य' आधुनिक परिवार के लिए पुनर्व्याख्यायित किया जा सकता है।

**दाम्पत्य में सहधर्मिता**

भारतीय विवाह-परम्परा में पति-पत्नी का संबंध सहधर्मिता से जुड़ा हुआ है। 'सहधर्मचारिणी' की संकल्पना पत्नी को पति के जीवन में सहभागी और सहयात्री के रूप में स्थापित करती है। गृह्यसूत्रों में विवाह-संस्कार के विभिन्न चरणों में पति-पत्नी के संयुक्त जीवन की मंगलकामनाएँ प्राप्त होती हैं।[15] आधुनिक संदर्भ में सहधर्मिता का अर्थ पति के प्रभुत्व या पत्नी की अधीनता से नहीं, बल्कि साझे जीवन और साझा उत्तरदायित्व से है। आज पति और पत्नी दोनों शिक्षा, रोजगार, आर्थिक निर्णय और सामाजिक जीवन में सक्रिय हो सकते हैं। इसलिए गृहस्थ जीवन की जिम्मेदारियाँ भी सहयोग और संवाद के आधार पर निर्धारित होनी चाहिए।

सहधर्मिता का यही आधुनिक स्वरूप दाम्पत्य-सौमनस्य को मजबूत करता है। जब पति-पत्नी स्वयं को प्रतिस्पर्धी नहीं, बल्कि सहयात्री मानते हैं, तब आर्थिक, सामाजिक और पारिवारिक कठिनाइयों का सामना अधिक संतुलित रूप से किया जा सकता है।

**आधुनिक पारिवारिक जीवन की चुनौतियाँ**

आधुनिक परिवार में अनेक सकारात्मक परिवर्तन हुए हैं। शिक्षा, रोजगार, आर्थिक स्वतंत्रता और व्यक्तिगत अधिकारों की चेतना ने स्त्री और पुरुष दोनों के व्यक्तित्व-विकास के अवसरों को बढ़ाया है। किंतु इसी के साथ परिवार अनेक नई चुनौतियों से भी घिरा है। नगरीकरण और रोजगार की गतिशीलता ने संयुक्त परिवार की पारंपरिक संरचना को प्रभावित किया है। एकल परिवारों में पति-पत्नी पर घरेलू, आर्थिक और भावनात्मक जिम्मेदारियों का दबाव अपेक्षाकृत अधिक हो सकता है। आर्थिक अस्थिरता और जीवन-शैली संबंधी बढ़ती अपेक्षाएँ तनाव का कारण बन सकती हैं। डिजिटल माध्यमों ने संचार को सरल बनाया है, किंतु प्रत्यक्ष संवाद के लिए उपलब्ध समय को कम किया है। अनेक परिवारों में साथ रहते हुए भी भावनात्मक दूरी दिखाई देती है। समस्या तब अधिक गंभीर हो जाती है जब पति-पत्नी एक-दूसरे की अपेक्षाओं और मानसिक स्थिति को समझने का प्रयास नहीं करते। ऐसे वातावरण में 'सौमनस्य' की आवश्यकता और बढ़ जाती है। वैदिक दृष्टि हमें यह स्मरण कराती है कि परिवार की स्थिरता केवल बाहरी साधनों से नहीं, बल्कि मनों के सामंजस्य से निर्मित होती है।

**संवाद : दाम्पत्य-सौमनस्य का आधार**

दाम्पत्य संबंधों में संवाद की भूमिका अत्यंत महत्त्वपूर्ण है। संवादहीनता अनेक छोटे मतभेदों को गंभीर विवाद में परिवर्तित कर सकती है। भारतीय ज्ञान-परम्परा में संवाद को ज्ञान, आत्मबोध और समाधान प्राप्त करने का प्रभावी माध्यम माना गया है। उपनिषदों से लेकर श्रीमद्भगवद्गीता तक प्रश्न, उत्तर और जिज्ञासा की समृद्ध संवादात्मक परम्परा दिखाई देती है। श्रीमद्भगवद्गीता में अर्जुन की मानसिक दुविधा का समाधान भी संवाद के माध्यम से ही होता है। अर्जुन अपनी मानसिक स्थिति को स्पष्ट करते हुए कहता है—

MEDHĀMANTHAN ISSN : 3139-7840
A Premier Peer-Reviewed, Open-Access, Bimonthly, International Online Research Journal
Dedicated to the fields of Arts, Humanities and Social Sciences
Adhering to UGC Guidelines and Quality Mandates
Volume: 1, Issue: 2 (JUL - AUG) 2026

"कार्पण्यदोषोपहतस्वभावः पृच्छामि त्वां धर्मसम्मूढचेताः।
यच्छ्रेयः स्यान्निश्चितं ब्रूहि तन्मे शिष्यस्तेऽहं शाधि मां त्वां प्रपन्नम्॥"[16]

अर्थात् मानसिक द्वंद्व से व्याकुल अर्जुन अपने संशय को स्पष्ट रूप से व्यक्त करते हुए श्रीकृष्ण से उचित मार्गदर्शन की अपेक्षा करता है। इस संवाद के माध्यम से उसकी दुविधा का समाधान होता है। दाम्पत्य जीवन में भी समस्याओं और मतभेदों को दबाने के स्थान पर परस्पर विश्वास एवं सम्मान के साथ व्यक्त करना आवश्यक है। इस प्रकार संवाद केवल विचारों का आदान-प्रदान नहीं, बल्कि भावनात्मक दूरी को कम करने और संबंधों में विश्वास पुनर्स्थापित करने का माध्यम बनता है। अतः दाम्पत्य-सौमनस्य के लिए सुनना, समझना और संवेदनशीलता के साथ उत्तर देना आवश्यक है। यही संवादशीलता आधुनिक परिवार को तनाव और मनोमालिन्य से बचाकर परस्पर सहयोग एवं आत्मीयता की ओर ले जा सकती है।

**दाम्पत्य और समकालीन भारतीय विधिक व्यवस्था**

आधुनिक भारत में दाम्पत्य संबंध व्यक्तिगत जीवन के साथ विधिक व्यवस्था से भी जुड़े हैं। भारतीय संविधान का अनुच्छेद 14 विधि के समक्ष समानता तथा अनुच्छेद 21 जीवन और व्यक्तिगत स्वतंत्रता की सुरक्षा प्रदान करता है।[17]

घरेलू हिंसा से महिलाओं का संरक्षण अधिनियम, 2005 घरेलू हिंसा से महिलाओं को संरक्षण प्रदान करने वाली महत्वपूर्ण विधिक व्यवस्था है। इसमें घरेलू हिंसा के विभिन्न रूपों को परिभाषित किया गया है तथा पीड़िता को विधिक संरक्षण और राहत प्रदान करने के उपाय किए गए हैं।[18]

भारतीय न्याय संहिता, 2023 ने भारतीय दण्ड संहिता, 1860 का स्थान लिया और 1 जुलाई 2024 से लागू हुई।[19] इसकी धारा 85 में पति अथवा पति के संबंधी द्वारा महिला के प्रति क्रूरता के लिए दंड का प्रावधान है तथा धारा 86 में 'क्रूरता' का अर्थ स्पष्ट किया गया है।[20]

इन विधिक व्यवस्थाओं का मूल उद्देश्य व्यक्ति की गरिमा और सुरक्षा की रक्षा करना है। दाम्पत्य संबंध में हिंसा, भय, उत्पीड़न और क्रूरता के लिए कोई स्थान नहीं हो सकता। वैदिक 'अविद्वेष' और आधुनिक विधिक संरक्षण, दोनों अपने-अपने स्तर पर सुरक्षित और सम्मानपूर्ण पारिवारिक जीवन की आवश्यकता को रेखांकित करते हैं।

यह भी ध्यान रखना आवश्यक है कि भारतीय न्याय संहिता की धारा 85–86 विशेष रूप से महिला के प्रति पति या उसके संबंधियों की क्रूरता से संबंधित हैं। अन्य प्रकार की हिंसा या अपराधों के लिए संहिता में पृथक सामान्य प्रावधान भी हैं। इसलिए आधुनिक दाम्पत्य जीवन में विधिक अधिकारों की जानकारी के साथ पारस्परिक कर्तव्य और नैतिक संवेदना भी आवश्यक हैं।

**अधिकार और कर्तव्य का संतुलन**

आधुनिक दाम्पत्य में अधिकारों की चेतना आवश्यक है, लेकिन अधिकारों के साथ कर्तव्य-बोध भी होना चाहिए। भारतीय गृहस्थधर्म व्यक्ति को केवल अपने हित के लिए नहीं, बल्कि परिवार और समाज के प्रति उत्तरदायित्व के लिए भी प्रेरित करता है। आज पति-पत्नी दोनों शिक्षा, रोजगार और आर्थिक गतिविधियों में समान रूप से सक्रिय हो सकते हैं। इसलिए पारिवारिक दायित्वों का निर्धारण भी परिस्थिति, क्षमता और पारस्परिक सहमति के आधार पर होना चाहिए। परिवार में किसी भी व्यक्ति की गरिमा का हनन सौमनस्य के विरुद्ध है। शारीरिक हिंसा के साथ-साथ अपमानजनक भाषा, निरंतर मानसिक दबाव, भय का वातावरण और आर्थिक नियंत्रण भी संबंधों को प्रभावित करते हैं। अतः दाम्पत्य में अधिकार और कर्तव्य का संतुलन ही स्वस्थ सहजीवन का आधार बन सकता है।

**आधुनिक परिवार के लिए 'सौमनस्य' की प्रासंगिकता**

वैदिक 'सौमनस्य' को आधुनिक जीवन में निम्न मूल्यों के माध्यम से व्यवहारिक बनाया जा सकता है—

**सहृदयता**—एक-दूसरे के सुख-दुःख और परिस्थितियों को समझना।

**मधुर वाणी**—असहमति के समय भी सम्मानजनक भाषा का प्रयोग करना।

**परस्पर सम्मान**—पति और पत्नी दोनों की गरिमा, विचार और स्वतंत्रता को स्वीकार करना।

MEDHĀMANTHAN ISSN : 3139-7840
A Premier Peer-Reviewed, Open-Access, Bimonthly, International Online Research Journal
Dedicated to the fields of Arts, Humanities and Social Sciences
Adhering to UGC Guidelines and Quality Mandates
Volume: 1, Issue: 2 (JUL - AUG) 2026

**साझा उत्तरदायित्व**—परिवार के आर्थिक, घरेलू और सामाजिक दायित्वों में सहयोग करना।

**अविद्वेष**—मतभेदों को स्थायी शत्रुता में परिवर्तित न होने देना।

**अहिंसा**—शारीरिक ही नहीं, मानसिक और वाचिक हिंसा से भी बचना।

**सहधर्मिता**—जीवन के महत्त्वपूर्ण निर्णयों में दोनों की सहभागिता सुनिश्चित करना।

इन मूल्यों के आधार पर दाम्पत्य संबंध प्रतिस्पर्धा के स्थान पर सहयोग, अधिकार-संघर्ष के स्थान पर संवाद और तनाव के स्थान पर सह-अस्तित्व की दिशा प्राप्त कर सकते हैं।

**निष्कर्ष**

वैदिक भारतीय दृष्टि में दाम्पत्य जीवन का मूल स्वर सहधर्मिता, सहृदयता, सौमनस्य और परस्पर सम्मान है। ऋग्वेद का विवाहसूक्त पति-पत्नी के हृदयों के सामञ्जस्य की कामना करता है और अथर्ववेद परिवार में सहृदयता, समान मनोभाव तथा अविद्वेष को प्रतिष्ठित करता है। इन मूल्यों से स्पष्ट होता है कि भारतीय दाम्पत्य-दृष्टि में संबंधों की स्थिरता केवल सामाजिक अनुबंध पर नहीं, बल्कि मानसिक और भावनात्मक एकता पर भी निर्भर मानी गई है। स्मृति-परम्परा ने गृहस्थ जीवन को सामाजिक और नैतिक उत्तरदायित्व से जोड़ा। मनुस्मृति में स्त्री-सम्मान, याज्ञवल्क्यस्मृति में पारिवारिक एवं व्यवहार संबंधी व्यवस्था तथा नारदस्मृति में विवाद-निवारण संबंधी विचार भारतीय सामाजिक चिंतन की विकसित परम्परा को सामने रखते हैं। पी. वी. काणे, ए. एस. अल्तेकर और पं. बलदेव उपाध्याय जैसे भारतीय विद्वानों के अध्ययनों से इन परम्पराओं को ऐतिहासिक एवं सांस्कृतिक संदर्भ में समझने में सहायता मिलती है। इनके अध्ययन यह संकेत करते हैं कि भारतीय पारिवारिक व्यवस्था को स्थिर और अपरिवर्तनीय मानने के स्थान पर उसके विकास और परिवर्तन को भी समझना आवश्यक है। आधुनिक परिवार के समक्ष उपस्थित चुनौतियाँ प्राचीन परिस्थितियों से भिन्न हैं। अतः वैदिक मूल्यों का अर्थ भी वर्तमान सामाजिक संदर्भ में पुनर्व्याख्यायित होना चाहिए। 'सौमनस्य' आज समान गरिमा, संवाद, सहधर्मिता, साझा उत्तरदायित्व, भावनात्मक संवेदना और अहिंसा के रूप में सार्थक हो सकता है। भारतीय संविधान समानता और गरिमा की आधारभूमि प्रदान करता है। घरेलू हिंसा से महिलाओं का संरक्षण अधिनियम, 2005 तथा भारतीय न्याय संहिता, 2023 दाम्पत्य जीवन में हिंसा और क्रूरता से विधिक सुरक्षा प्रदान करते हैं। किंतु कानून जहाँ आवश्यक संरक्षण देता है, वहीं परिवार के भीतर प्रेम, विश्वास और सौमनस्य का निर्माण नैतिक चेतना से होता है।

अतः वैदिक 'सौमनस्य' को आधुनिक परिवार के लिए किसी रूढ़ पारिवारिक व्यवस्था के रूप में नहीं, बल्कि जीवन-मूल्य के रूप में ग्रहण किया जाना चाहिए। इसका सार है—एक-दूसरे को सुनना, समझना, सम्मान देना, साथ निर्णय लेना और कठिन परिस्थितियों में भी संबंधों को संवाद एवं संवेदना से सँभालना। ऋग्वेद का कालजयी संदेश— "संगच्छध्वं संवदध्वं सं वो मनांसि जानताम्।"[21] आज भी परिवार के लिए उतना ही प्रासंगिक है। साथ चलना, संवाद करना और मनों में सामंजस्य स्थापित करना ही दाम्पत्य-सौमनस्य का मूल है। इस प्रकार वैदिक सौमनस्य आधुनिक पारिवारिक जीवन में मानवीय गरिमा, भावनात्मक संतुलन और स्थायी पारिवारिक समरसता की सशक्त भारतीय आधारभूमि बन सकता है।

Endnotes

1. मनुस्मृति, 3.67–78।
2. ऋग्वेद, 10.85.47, विवाहसूक्त।
3. अथर्ववेद, 3.30.1।
4. ऋग्वेद, 10.85.46।
5. अथर्ववेद, 6.94.2।
6. ऋग्वेद, 10.191.2–4।
7. अथर्ववेद, 3.30.2।

MEDHĀMANTHAN ISSN : 3139-7840
A Premier Peer-Reviewed, Open-Access, Bimonthly, International Online Research Journal
Dedicated to the fields of Arts, Humanities and Social Sciences
Adhering to UGC Guidelines and Quality Mandates
Volume: 1, Issue: 2 (JUL - AUG) 2026

8. अथर्ववेद, 3.30.3।
9. मनुस्मृति, 3.56।
10. याज्ञवल्क्यस्मृति, 1.73–86।
11. नारदस्मृति, व्यवहारप्रकरण।
12. P. V. Kane, History of Dharmaśāstra, Vol. II, Part I, Bhandarkar Oriental Research Institute, Poona, 1941, pp. 427–440।
13. A. S. Altekar, The Position of Women in Hindu Civilization, Motilal Banarsidass, Delhi, 1956, pp. 1–18।
14. बलदेव उपाध्याय, *वैदिक साहित्य और संस्कृति*, शारदा संस्थान, वाराणसी, 1967, पृ. 178–186।
15. पारस्कर गृह्यसूत्र, 1.8–1.14।
16. श्रीमद्भगवद्गीता, 2.7।
17. भारत का संविधान, अनुच्छेद 14, 15 एवं 21।
18. The Protection of Women from Domestic Violence Act, 2005, Act No. 43 of 2005, Section 3।
19. The Bharatiya Nyaya Sanhita, 2023, Act No. 45 of 2023, Government of India।
20. भारतीय न्याय संहिता, 2023, धारा 85–86।
21. ऋग्वेद, 10.191.2।

**Bibliography**


- Altekar, A. S. (1956). *The position of women in Hindu civilization.* Motilal Banarsidass.
- Government of India. (2005). *The Protection of Women from Domestic Violence Act, 2005* (Act No. 43 of 2005). Ministry of Law and Justice.
- Government of India. (2023). *The Bharatiya Nyaya Sanhita, 2023* (Act No. 45 of 2023). Ministry of Law and Justice.
- Kane, P. V. (1941). *History of Dharmaśāstra* (Vol. 2, Pt. 1). Bhandarkar Oriental Research Institute.
- Kātyāyana. (2008). *Pāraskara gṛhyasūtram*. Chaukhamba Sanskrit Pratishthan.
- Manu. (2020). *Manusmṛtiḥ*. Gita Press.
- Ministry of Law and Justice, Government of India. (2024). *Bhārata kā saṃvidhāna* [The Constitution of India]. Legislative Department.
- Nārada. (2002). *Nāradasmṛtiḥ*. Chowkhamba Sanskrit Series Office.
- Upadhyaya, B. (1967). *Vaidika sāhitya aura saṃskṛti*. Sharada Sansthan.
- Vedavyāsa. (2020). *Śrīmadbhagavadgītā*. Gita Press.
- Vishva Bandhu. (Ed.). (1960). *Atharvavedaḥ (Śaunakīyaḥ)* (With Sāyaṇācārya's commentary). Vishveshvaranand Vedic Research Institute.
- Vishva Bandhu. (Ed.). (1963). *Ṛgvedaḥ* (With Sāyaṇācārya's commentary). Vishveshvaranand Vedic Research Institute.
- Yājñavalkya. (2019). *Yājñavalkyasmṛtiḥ*. Chaukhamba Sanskrit Pratishthan.